कर्मचारियों का ही संग करता है। वह तो बस अनन्यभाव से श्रीकृष्ण के लिए कर्म में तत्पर रहता है। कर्मफल को श्रीकृष्ण के अर्पण करने से उसके कर्म निःसन्देह दिव्य हो जाते हैं।

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते।
त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः।।१०।।

न=न; **द्वेष्टि**=द्वेष करता; **अकुशलम्**=दुःखद; **कर्म**=कर्म से; **कुशले**=सुखदायी कर्म में; **न**=न; **अनुषज्जते**=आसक्त होता; **त्यागी**=त्यागी; **सत्त्व**=सत्त्वगुण में; **समाविष्टः**=लीन; **मेधावी**=स्थिरबुद्धि; **छिन्नसंशयः**=सब संशयों से मुक्त।

अनुवाद

जो सत्त्वगुण में स्थित पुरुष दुःखद कर्म से द्वेष नहीं करता है और सुखदायी कर्म में आसक्त नहीं होता है, उस स्थिरबुद्धि के कर्म-विषयक सारे संशय नष्ट हो जाते हैं।।१०।।

तात्पर्य

भगवद्गीता में अन्यत्र उल्लेख है कि कोई क्षणभर के लिए भी कर्म के बिना नहीं रह सकता। अतएव जो श्रीकृष्ण के लिए कर्म करता है और फल को स्वयं न भोग कर सर्वस्व श्रीकृष्ण के अर्पण कर देता है, वही सच्चा त्यागी है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रीकृष्णभावनामृत संघ के बहुत से सदस्य अपने कार्यालय, फैक्टरी, आदि में अथक परिश्रम करते हैं और इस प्रकार होने वाली अपनी सम्पूर्ण आय संघ को समर्पित कर देते हैं। ऐसे महात्माजन वास्तव में संन्यासी हैं; वस्तुतः संन्यास आश्रम में स्थित हैं। कर्मफल का त्याग किस प्रकार और किसके लिए करना चाहिए, यहाँ यह स्पष्ट किया गया है।

न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः।
यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते।।११।।

न=नहीं; **हि**=निःसन्देह; **देहभृता**=(किसी भी) देहबद्ध जीव के लिए; **शक्यम्**=सम्भव है; **त्यक्तुम्**=त्यागना; **कर्माणि**=कर्मों को; **अशेषतः**=पूर्ण रूप से; **यः तु**=जो कोई भी; **कर्मफलत्यागी**=कर्म फल का त्यागी है; **सः**=वही; **त्यागी**=त्यागी है; **इति**=ऐसा; **अभिधीयते**=कहा जाता है।

अनुवाद

देहबद्ध जीव कर्म को पूर्ण रूप से कभी नहीं त्याग सकता; इसलिए जो फल का त्यागी है, वही सच्चा त्यागी है, ऐसा कहा जाता है।।११।।

तात्पर्य

जो श्रीकृष्ण से अपने सम्बन्ध के ज्ञान के साथ कृष्णभावनाभावित कर्म करता है, वह पुरुष नित्यमुक्त है। इसलिए जीवन के अन्त में उसे अपने कर्मों के सुख-दुःखादि फल को नहीं भोगना पड़ता।